नौवां अध्याय

।।दिव्य सारांश।।

अध्याय 9 के श्लोक 1, 2 में कहा है कि सब ज्ञानों का रहस्य युक्त विशेष गुप्त ज्ञान तुझे कहूंगा जिसे जान कर मानव अशुभ कर्म त्याग देता है अर्थात् अशुभ कर्मों से मुक्त हो जाता है जो सर्व गुप्त ज्ञानों का राजा है।

।। पूर्ण परमात्मा ही सर्व जीवों का आधार।।

अध्याय 9 के श्लोक 3 से 6 में कहा है कि जो नियम गीता अध्याय 8 के श्लोक 5 से 10 में कहा है, यदि उसके आधार पर साधक साधना नहीं करता वह जन्म-मरण के चक्र में रहता है। फिर कहा है कि ये सर्व प्राणी उस परमात्मा के आधार हैं परंतु मैं इनसे न्यारा (ब्रह्मलोक में) हूँ क्योंकि काल ब्रह्मलोक तथा इक्कीसवें ब्रह्मण्ड में अलग से रहता है तथा ब्रह्म लोक में भी महाब्रह्मा-महाविष्णु तथा महाशिव रूप में गुप्त तथा भिन्न रहता है। वास्तव में यहाँ सर्व प्राणियों को वह पूर्ण परमात्मा माया द्वारा व्यवस्थित रखता है। मैं (काल) प्राणियों में नहीं हूँ। जैसे वायु आकाश में ठहराई है वैसे ही जीव उस परमात्मा में अपने कर्माधार पर उसी की (शक्ति) माया द्वारा व्यवस्थित हैं। गीता अध्याय 13 श्लोक 17 तथा अध्याय 18 श्लोक 61 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि पूर्ण परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में विशेष रूप से स्थित है। वही सर्व प्राणियों को कर्माधार से यन्त्र की तरह भ्रमण कराता है।

गीता अध्याय 9 के श्लोक 3-6 का अनुवाद :-

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 3 का अनुवाद :- हे परन्तप यानि अर्जुन! जो धर्म यानि विधान मैंने गीता अध्याय 8 श्लोक 5-10 में बताया है कि मेरी भक्ति करेगा तो मुझे प्राप्त होगा। युद्ध भी करना होगा और जैसा अध्याय 2 श्लोक 12, अध्याय 4 श्लोक 5, अध्याय 10 श्लोक 2 में वर्णन है कि मेरे और तेरे जन्म-मत्यु सदा रहेंगे, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। यदि उस परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करता है तो उसी धर्म यानि विधानानुसार उस अविनाशी परमात्मा को प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8-10 में उस परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने को कहा है तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 62, 66 व अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि उस परमेश्वर की शरण में जा। उसकी कपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उसी परमेश्वर की भक्ति कर जिसने संसार रूपी वक्ष की रचना की है। इस धर्म यानि नियम अश्रद्धा रखने वाला यानि इस नियम का पालन करने वालों के लिए परम अक्षर ब्रह्म (अप्राप्य) प्राप्त नहीं होता। मुझे प्राप्त होकर जन्म-मत्यु संसार चक्र में लौटते हैं यानि बार-बार जन्मते-मरते हैं।(9/3)*

❖ *विशेष :- इस अध्याय 9 के श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने अपने को ''अव्यक्त मूर्ति'' कहा है जिससे सिद्ध है कि काल ब्रह्म अव्यक्त यानि छुपा है, परंतु साकार है।*

अध्याय 9 श्लोक 4 का अनुवाद :- (इदम्) यह (सर्वम्) सम्पूर्ण (जगत्) संसार (मया) मेरे (अव्यक्त) अव्यक्त यानि परोक्ष (मूर्तिना) रूप द्वारा (ततम्) परिपूर्ण है। (मत्) मेरे में (स्थानि) स्थित हैं। (सर्व भूतानि) सब प्राणी मेरे आधार हैं (च) और (अहम्) मैं (तेषु) उनमें (न अवस्थित) स्थित नहीं हूँ।(9/4)

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 5 का अनुवाद :- (मे) मेरी (ऐश्वरम् योगम्) मेरी लीला (पश्य) देख यानि मेरी योगमाया समझ (भूतनि न मत्स्थानि) प्राणी मुझमें स्थित नहीं हैं (च) और (मम) मेरी (आत्मा) आत्मा (च) और (भूत भावान) प्राणियों को उत्पन्न करने वाला (भूत भृत्) प्राणियों का पोषण करने वाला (न भूतस्थः) प्राणियों में स्थित नहीं है।(9/5)*

भावार्थ :- काल ब्रह्म ने बताया है कि यह सब गुप्त ज्ञानों का राजा विशेष ज्ञान है। मेरी लीला तो देख, मैं अपने अंतर्गत प्राणियों में स्थित नहीं हूँ तथा मेरी आत्मा और प्राणियों को उत्पन्न करने वाला सबके प्राणियों का पोषण करने वाला परमेश्वर भी प्राणियों में स्थित नहीं है यानि काल ब्रह्म भी ऊपर अपने ब्रह्मलोक में महाब्रह्मा रूप में विद्यमान है तथा परमेश्वर भी अपने सतलोक में विद्यमान है। उसकी निराकार शक्ति सर्व प्राणियों व ब्रह्मण्डों को चला रही है।

जैसा कि गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूषों का वर्णन है। उसी प्रकार तीन अव्यक्त भी इन्हीं को कहा है। नं. 1. अव्यक्त काल ब्रह्म यानि गीता ज्ञान देने वाला है। उसने अपने विषय में गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 तथा अध्याय 9 के श्लोक 4 में बताया है। नं. 2 अव्यक्त अक्षर पुरूष है। गीता अध्याय 8 के श्लोक 18-19 में इसका वर्णन है। नं. 3 अव्यक्त परम अक्षर ब्रह्म है जिसका वर्णन गीता अध्याय 8 श्लोक 20-22 में है। गीता अध्याय 15 के श्लोक 16 में जो दो पुरूष कहे हैं :- 1. क्षर पुरूष, यह प्रथम अव्यक्त है। 2. अक्षर पुरूष, यह दूसरा अव्यक्त है। नं. 3 (उत्तम पुरूषः तू अन्य) परम अक्षर ब्रह्म है। यह तीसरा अव्यक्त है।

।। ब्रह्म (काल) के उपासक का जन्म-मरण निश्चित है।।

अध्याय 9 के श्लोक 7 में स्पष्ट है पहले तो काल भगवान कह रहा है कि मेरे उपासक का जन्म-मरण नहीं होता। अब श्लोक 7 में कहता है कि अर्जुन कल्पों के अंत में सर्व प्राणी मेरी प्रकृति को प्राप्त होते हैं। (अर्थात नष्ट हो जाते हैं)। कल्पों के प्रारम्भ में उनको फिर रचता हूँ। इससे स्वसिद्ध है कि काल ब्रह्म की साधना से कोई भी प्राणी जन्म-मृत्यु से मुक्त नहीं होता। अध्याय 8 के श्लोक 16 में प्रमाण है कि ब्रह्मलोक से लेकर सब (ब्रह्मा-शिव-विष्णु तथा इनके लोक तथा अन्य लोक) लोक पुनरावर्ती में हैं यानि इन लोकों में गए साधक का पुनर्जन्म अवश्य होता है तथा अन्य अनुवादकर्ताओं ने लिखा है कि मुझे प्राप्त होकर पुर्नजन्म नहीं होता और काल प्राप्त हो ही नहीं सकता। (चूंकि अध्याय 11 के श्लोक 47 और 48 में प्रत्यक्ष है कि किसी भी साधना से मुझे प्राप्त नहीं हो सकता) इसलिए सर्व प्राणियों की मुक्ति असम्भव। इसलिए अध्याय 7 के श्लोक 18 में अनुत्तमम् गतिम् घटिया से घटिया मुक्ति कही है।

।। प्रकृति व ब्रह्म (काल) से प्राणियों की उत्पत्ति।।

अध्याय 9 के श्लोक 8 में कहा है कि अपनी प्रकृति को अंगीकार यानि देवी दुर्गा से सहवास करके स्वभाव बल (मन द्वारा वासनाओं) से परतन्त्र (वश) हुए इन सम्पूर्ण प्राणियों को बार-बार रचता हूँ। अध्याय 9 के श्लोक 9 में कहा है कि मैं (ब्रह्म) कर्मों के वश नहीं हूँ। (चूंकि कर्म ब्रह्म से उत्पन्न हैं। अध्याय 3 के श्लोक 14,15 में।)

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 10 में कहा है - हे अर्जुन! मेरे आधीन (पत्नी रूप में) प्रकृति यानि देवी दुर्गा चराचर सहित जगत् को उत्पन्न करती है। इस प्रकार यह जन्म-मरण चक्र चलता रहता है।*

।। ब्रह्म (काल) कभी स्थूल शरीर में आकार में नहीं आता।।

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 11 में कहा है कि जो मूर्ख लोग पूर्ण परमात्मा तथा मेरे परम भाव को {काल का परम भाव अध्याय 7 के श्लोक 24 में है कि मेरे घटिया भाव को यानि मैं कभी आकार में नहीं आता। यह मेरा अविनाशी (अटल) नियम (भाव) है कि मैं कभी आकार में शरीर धारण करके नहीं आता। मेरा जन्म-मरण सदा बना रहता है। सबका मालिक यानि महेश्वर सदा अविनाशी है व कभी जन्मता-मरता नहीं है। वही सर्व का उत्पत्तिकर्ता, धारण-पोषणकर्ता है।} नहीं जानते। मुझे मनुष्य शरीर धारण करने वाला तुच्छ समझते हैं अर्थात् मैं स्थूल शरीर धारी श्री कष्ण नहीं हूँ।*

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 11 का अनुवाद :- (मूढ़ाः) मूर्ख जन (माम्) मुझको (मानुसीम्) मनुष्य का (तनुम्) शरीर (आश्रितम्) धारण करने वाला (अवजनन्ति) तुच्छ जानते हैं क्योंकि वे (मम) मेरे व (भूत महेश्वरम्) प्राणियों के महान स्वामी के (परम् भावम अजानन्त) विशेष अन्य भाव को नहीं जानते।(9/11)*

भावार्थ :- तत्वज्ञान के अभाव से मूर्ख प्राणी मुझे सर्व प्राणियों का प्रभु मानते हैं। मैं महेश्वर नहीं हूँ, महेश्वर तो पूर्ण परमात्मा है। जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 व 16, 17, गीता अध्याय 18 श्लोक 46, 61, 62, 66 में तथा अध्याय 8 श्लोक 3, 8, 9, 10, 20-21-22 में वर्णन है तथा मुझे शरीर धारण करने वाला अवतार रूप में श्री कष्ण समझ रहा है, मैं श्री कष्ण नहीं हूँ। इसी का प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में दोनों (ब्रह्म तथा पूर्ण ब्रह्म) को अव्यक्त बताया है तथा विस्तत वर्णन है। उपरोक्त मूर्खों का विवरण निम्न श्लोक में भी दिया है कि वे कहने से भी नहीं मानते, अपनी जिद्द के कारण मुझे सर्वेश्वर-महेश्वर व श्री कष्ण ही मानते रहते हैं। यदि कोई तत्वदर्शी संत समझाएगा की पूर्ण परमात्मा कोई और है तथा श्री कष्ण जी ने गीता जी नहीं बोला तथा यह काल महेश्वर नहीं है। वे मूर्ख नहीं मानते।

विशेष :-- गीता 9 श्लोक 11 का अनुवाद अन्य अनुवाद कर्ता ने किया है उस में प्रथम पंक्ति के दूसरे अक्षर ''माम्'' को द्वितिय पंक्ति के ''भूत महेश्वरम्'' से जोड़ा है जो व्याकरण दष्टिकोण से न्याय संगत नहीं है क्योंकि ''भूत महेश्वरम्'' के साथ ''मम'' शब्द लिखा है अन्य अनुवाद कर्ताओं ने गीता ज्ञान दाता को सम्पूर्ण प्राणियों का महान् ईश्वर किया है। यदि ऐसा ही माना जाए तो पाठक जन कप्या इसका भावार्थ यह जाने की ब्रह्म कह रहा है कि मैं अपने इक्कीस ब्रह्मण्डों के सर्व प्राणियों का महान ईश्वर अर्थात् प्रमुख हूँ। वास्तव में उपरोक्त अनुवाद जो मुझ दास द्वारा किया है। वह यथार्थ है।

।। ब्रह्म (काल) के उपासक उसी का आहार।।

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 12 में कहा है कि आसुरी स्वभाव (वत्ति) वाले व्यर्थ कार्यों (ताश खेलना, शराब पीना, व्यर्थ की बातें करना, हुक्का पीना, मांस खाना, निन्दा करना, सिनेमा देखना, चोरी-जारी करना आदि) में तथा व्यर्थ आशाओं में व्यर्थ ज्ञान वाले मूर्ख राक्षसी स्वभाव वश रहते हैं।*

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 13 में वर्णन है कि जो भक्त आत्मा हैं वे मुझे प्राणियों का मालिक अविनाशी (जैसा अध्याय 15 के श्लोक 18 में कहा है कि मैं केवल मेरे इक्कीस ब्रह्माण्डों में जितने स्थूल शरीर के प्राणियों तथा जीवात्मा हैं, उनसे उत्तम हूँ। इसलिए लोक व वेदों में पुरुषोत्तम प्रसिद्ध हूँ परंतु वास्तव में पुरूषोत्तम व अविनाशी तो कोई और ही है। गीता जी के अध्याय 15 के श्लोक 17 में) जान कर अनन्य मन (आन उपासना त्याग कर शास्त्रानुकूल साधना और तीनों गुणों*

से ऊपर उठ कर केवल एक अक्षर ''ऊँ'' का जाप करते हुए) से मेरा भजन करते हैं। अध्याय 9 के श्लोक 14 में बताया है कि ऐसे सुचारू भक्त (दृढ़ नियमों वाले) निरन्तर मेरे गुणों व नाम का कीर्तन करते हुए तथा मेरी प्राप्ति के लिए यत्न करते हैं और मुझको प्रणाम करते हैं। सदा मेरे ध्यान में लगे हुए भिन्न-2 प्रकार से मेरी उपासना करते हैं। ये सब काल उपासक भी काल का आहार बनते हैं। प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 21 में स्पष्ट है कि जो महर्षिजन तथा देवताजन काल ब्रह्म की स्तुति कर रहे हैं, गुणगान कर रहे हैं, आप उनको भी खा रहे हो। वे आपके मुख में प्रवेश कर रहे हैं।

❖ *अध्याय 9 श्लोक 15-19 का सारांश :-*

❖ *श्लोक 15 :- अन्य साधक मुझे ज्ञान यज्ञ यानि वेदों के श्लोकों का प्रतिदिन पठन-पाठन करके मेरी पूजा करते हैं। जैसे यजुर्वेद के अध्याय 36 के मंत्र के आगे ओउम् अक्षर लगाकर गायत्री मंत्र नाम रखकर इसी एक वेद मंत्र का सैंकड़ों बार प्रतिदिन उच्चारण करने लगे। इस प्रकार वेद मंत्रों या गीता के श्लोकों या संतों की वाणी व सत्संग सुनने को ज्ञान यज्ञ कहा जाता है। इससे मोक्ष नहीं होगा। अन्य साधक बहुत प्रकार से मेरे (विश्वतः मुखम्) को विश्व का मुखिया रूप में मानकर मेरी उपासना करते हैं।(9/15)*

❖ *श्लोक 16 :- काल ब्रह्म जो गीता ज्ञान दाता है, यह इस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। जितने जीवात्मा इसके जाल में फँसे हैं। उनका सर्वेस्वा यह बना है। इसके लोक में कर्म करके ही फल मिलता है। इसलिए कहा है कि मेरे यानि काल ब्रह्म से सुविधा लेने के लिए तथा स्वर्ग में जाने के लिए धार्मिक क्रियाऐं करनी पड़ती है। इसलिए कहा है कि क्रतु यानि धार्मिक कर्म में हूँ। यज्ञ स्वधा औषधि हवन करने की सामग्री, घी, अग्नि आदि-आदि में ही हूँ यानि सब मेरा है। मुझसे लाभ लेने के लिए सब करना पड़ेगा।*

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 17 में कहा है कि मैं सब जगत का धारण कर्त्ता, माता-पिता-दादा, वेदों में जानने योग्य पवित्र ऊँ (ओंकार) मन्त्र, ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद मैं ही हूँ अर्थात् ब्रह्म ज्ञान व उपासना ही तीनों वेदों में है। चौथा अथर्ववेद है जो सष्टि रचना की जानकारी देता है।*

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 18 में कहा है कि मेरे इक्कीस ब्रह्मण्डों में मैं ही स्वामी, स्थिति धारण कर्त्ता, साक्षी निवास स्थान, शरण योग्य परोपकारी, उत्पत्ति व विनाश कर्त्ता वाले इस अविनाशी विधान का कारण भी मैं ही हूँ।*

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 19 में कहा है कि मैं ही गर्मी - वर्षा, आकर्षण व बरसात, मैं ही अमत और मत्यु सत-असत् हूँ।*

भगवान काल ने कहा है कि जो भी उपासक वेदों के ज्ञान आधार से शास्त्र अनुकूल साधना करता है उनके लिए उपास्य मैं (काल) ही हूँ। परंतु अंत में सर्व को खाऊँगा। किसी को नहीं छोडूं। फिर कर्माधार पर स्वर्ग-नरक, काल द्वारा व्यवस्थित विधान अनुसार चारों मुक्ति फिर चौरासी लाख जूनियों में डालूँगा। प्रमाण के लिए देखें गीता जी के अध्याय 11 के श्लोक 21 में जिसमें अर्जुन आँखों देखा हाल कह रहा है। जब काल भगवान ने अपना वास्तविक विराट रूप दिखाया। उसमें अर्जुन देख रहा है तथा कह रहा है कि भगवन आप तो देवताओं के समूह (झुण्ड के झुण्ड) को भी खा रहे हो। कुछ भयभीत हो कर हाथ जोड़ कर आपके नाम व गुणों का कीर्तन कर रहे हैं। महर्षि व सिद्ध समुदाय कल्याण हो! (बख्शदो-2) कल्याण हो! कहकर वेदों के उत्तम-2 स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं, आप उन्हें भी खा रहे हैं। फिर गीता जी के अध्याय 11 के श्लोक 32 में काल कह रहा है कि मैं सबको खाने के लिए प्रकट हुआ हूँ तथा बढ़ा हुआ काल हूँ, किसी को नहीं छोडूँ।

।। पवित्र वेदों अनुसार साधना का परिणाम केवल स्वर्ग-महास्वर्ग प्राप्ति, मुक्ति नहीं।।

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 20-25 का अनुवाद :-*

❖ *अध्याय 9 श्लोक 20 :- (त्रै विद्याः) तीनों वेदों ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा सामवेद में वर्णित साधना के आधार से (सोमयाः) अमर परमेश्वर के अमरत्व के आनंद की प्राप्ति के लिए (पूत पापाः) सर्व विकार त्यागकर सर्व प्रकार के पापों से बचे हुए साधक (माम्) मुझको (इष्टवा) इष्ट देव यानि पूज्य देव रूप में (यज्ञैः) यज्ञों द्वारा पूजकर (स्वर्गतिम्) स्वर्ग जाने वाली गति यानि मुक्ति के लिए (प्रार्थयन्ते) प्रार्थना-पूजा करते हैं। (ते) वे (पूण्याम्) अपने पुण्यों के फल रूप से (सुर-इन्द्र=सुरेन्द्र) देवताओं के स्वामी इन्द्र के (लोकम्) लोक को (आसाद्य) प्राप्त होकर (दिवि) स्वर्ग में (दिव्यान्) दिव्य (देव भोगान्) देवताओं वाले भोगों को (अश्नन्ति) भोगते हैं। अपने भक्ति कर्मों का पुण्य खाते हैं।(9/20)*

भावार्थ :- वेदों में महिमा तो अमर परमात्मा यानि परम अक्षर ब्रह्म की भी है जिसमें उसकी भक्ति से साधक पापरहित होकर अमर सुख यानि पूर्ण मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। परंतु भक्ति के मंत्र व यज्ञ आदि-आदि क्रियाऐं काल ब्रह्म तक हैं। इस कारण से वे इष्ट रूप में ब्रह्म को पूजकर काल जाल में रह जाते हैं। ब्रह्म साधना व यज्ञों का फल स्वर्ग-महास्वर्ग में पुण्यों का फल भोगकर पुनः संसार में जन्म है।(9/20)

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 21 :- (ते) वे भ्रमित साधक (तम्) उस पूर्ण परमात्मा के भ्रम में साधना का फल (विशालम्) विशाल (स्वर्ग लोकम्) स्वर्ग लोक यानि महास्वर्ग को (भुक्त्वा) भोगकर (पूण्य) पुण्यों के (क्षीणे) क्षीण यानि समाप्त होने पर (मर्त्य लोकम्) मनुष्य लोक यानि पथ्वी लोक को (विशन्ति) प्राप्त होते हैं। (एवम्) इस प्रकार (त्रयी धर्मम्) तीनों वेदों में कही धार्मिक साधना का (अनुप्रपन्ना) आश्रय लेने वाले (काम कामा) पूर्ण ज्ञान न होने के कारण भक्ति के प्रतिफल की इच्छा करने वाले (गतागतम्) बार-बार आवागमन को (लभन्ते) प्राप्त होते हैं अर्थात् पुण्यों के फल रूप से स्वर्ग में जाते हैं। पुण्य क्षीण होने पर मत्यु लोक में अन्य प्राणियों के शरीरों में जन्म लेने के लिए गिरते हैं।(9/21)*

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 22 :- जो साधक अन्य देवी-देवताओं की साधना न करके पूर्ण ब्रह्म के भ्रम में मेरी साधना करते हैं, उनकी (योग) भक्ति (क्षेमम्) रक्षा मैं ही करता हूँ।(9/22)*

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 23 :- हे अर्जुन! जो अन्य देवताओं व अन्य पूर्ण परमात्मा को (अपि) भी पूजते हैं। वे मुझको ही पूजते हैं यानि काल जाल में ही रहते हैं। उनकी वह पूजा (अविधिपूर्वकम्) शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण अर्थात् अज्ञानपूर्वक है।(9/23)*

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 24 :- (हि) क्योंकि (सर्वयज्ञानाम्) सब यज्ञों का (भोक्ता) भोगने वाला (च) और (प्रभु) केवल 21 ब्रह्मण्डों का स्वामी (अहम) मैं हूँ (च) और (ते) वे (एव) इस प्रकार (माम्) मुझको (तत्वेन) तत्व से (न) नहीं (अभिजानन्ति) जानते। (तू) तो वे (च्यवन्ति) जन्म-मरण चक्र में गिरते हैं।(9/24)*

गीता अध्याय 9 के श्लोक 20-21 में कहा है कि जो मनोकामना (सकाम) सिद्धि के लिए मेरी पूजा तीनों वेदों में वर्णित शास्त्र अनुकूल करते हैं वे अपने कर्मों के आधार पर स्वर्ग में आनन्द मनाकर फिर जन्म-मरण में आ जाते हैं अर्थात् यज्ञ चाहे शास्त्रानुकूल भी हो उनका एक मात्र लाभ सांसारिक भोग, स्वर्ग है क्योंकि काल ब्रह्म की भक्ति से पाप नाश नहीं होते। इसलिए पाप कर्मों के

कारण नरक व चौरासी लाख जूनियों में भी कर्म दण्ड भोगना पड़ता है। जब तक तीनों मंत्र (ओ३म तथा तत् व सत् सांकेतिक) पूर्ण संत से प्राप्त नहीं होते।

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 22 में कहा है कि जो निष्काम भाव से मेरा चिन्तन करते हुए उस पूर्ण परमात्मा की शास्त्रानुकूल पूजा करते हैं, उनकी भक्ति की रक्षा मैं ही करता हूँ।*

।। वेदों अनुसार साधना न करने वाले पूर्ण मुक्त नहीं।।

पवित्र गीता अध्याय 9 के श्लोक 23, 24 में कहा है कि जो व्यक्ति अन्य देवी-देवताओं को पूजते हैं वे भी मेरी पूजा ही कर रहे हैं। परंतु उनकी यह पूजा अविधिपूर्वक यानि शास्त्रविरूद्ध है (देवी-देवताओं को नहीं पूजना चाहिए) क्योंकि सम्पूर्ण यज्ञों का भोक्ता व स्वामी मैं ही हूँ। वे भक्त मुझे अच्छी तरह नहीं जानते कि यह काल है। इसलिए इसकी पूजा करके भी पतन को प्राप्त होते हैं जिससे नरक व चौरासी लाख जूनियों का कष्ट सदा बना रहता है। जैसे गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 में कहा है कि सर्व यज्ञों में प्रतिष्ठित अर्थात् सम्मानित, जिसको यज्ञ समर्पण की जाती है वह परमात्मा (सर्व गतम् ब्रह्म) पूर्ण ब्रह्म है। वही कर्माधार बना कर सर्व प्राणियों को प्रदान करता है। परन्तु पूर्ण सन्त न मिलने तक सर्व यज्ञों का भोग (आनन्द) काल (मन रूप में) ही भोगता है, इसलिए कह रहा है कि मैं सर्व यज्ञों का भोक्ता व स्वामी हूँ।

।। श्राद्ध निकालने (पितर पूजने) वाले पितर बनेंगे, उनकी मुक्ति नहीं।।

❖ *गीता अध्याय 9 श्लोक 25 का अनुवाद :- (देवव्रता) देवताओं को पूजने वाले (देवान्) देवताओं को (यान्ति) प्राप्त होते हैं। (पित व्रता) पितरों को पूजने वाले (पितन्) पितरों को (यान्ति) पूजते हैं (भूतेज्याः) भूतों को पूजने वाले (भूतानि) भूतों को (यान्ति) प्राप्त होते हैं। (मद्याजिनः=मत् याजिनः) मेरा पूजन करने वाले (माम्) मुझको (अपि) भी (यान्ति) प्राप्त होते हैं।*

विवेचन :- इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट कहा है कि मेरी पूजा करने वाले मुझे भी प्राप्त होते हैं। पहले कहा है कि पितरों को पूजने वाले पितरों को, भूतों को पूजने वाले भूतों को, देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। अपनी पूजा करने वालों के लिए कहा है कि मेरा पूजन करने वाले मुझे ही प्राप्त होते हैं। ऐसा कहने के पीछे रहस्य यह है कि यदि ब्रह्म काल की शास्त्र अनुसार साधना अनन्य मन से करते हैं तो ब्रह्म काल को प्राप्त होते हैं। जो ब्रह्म काल को इष्ट रूप में मानकर साधना अन्य देवताओं की भी करते हैं, वे भूत-पितर आदि योनियों को भी प्राप्त करते हैं। जो काल ब्रह्म के शास्त्रानुसार साधक भी कुछ समय ब्रह्मलोक में सुख भोगकर पितर, भूत व अन्य प्राणियों के शरीरों को भी प्राप्त होते हैं।(9/25)

गीता अध्याय 9 के श्लोक 25 में कहा है कि देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं, पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं, भूतों को पूजने (पिण्ड दान करने) वाले भूतों को प्राप्त होते हैं अर्थात् भूत बन जाते हैं, शास्त्रानुकूल (पवित्र वेदों व गीता अनुसार) पूजा करने वाले मुझको भी प्राप्त होते हैं अर्थात् काल द्वारा निर्मित स्वर्ग व महास्वर्ग आदि में कुछ ज्यादा समय मौज कर लेते हैं।

विशेष :- जैसे कोई तहसीलदार की नौकरी (सेवा-पूजा) करता है तो वह तहसीलदार नहीं बन सकता। हाँ उससे प्राप्त धन से रोजी-रोटी चलेगी अर्थात् उसके आधीन ही रहेगा। ठीक इसी प्रकार जो जिस देव (श्री ब्रह्मा देव, श्री विष्णु देव तथा श्री शिव देव अर्थात् त्रिदेव) की पूजा

(नौकरी) करता है तो उन्हीं से मिलने वाला लाभ ही प्राप्त करता है। त्रिगुणमयी माया अर्थात् तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) तथा अन्य देवी-देवताओं की पूजा का निषेध पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 तथा 20 से 23 तक में भी है। इसी प्रकार कोई पितरों की पूजा (नौकरी-सेवा) करता है तो पितरों के पास छोटा पितर बन कर उन्हीं के पास कष्ट उठाएगा। इसी प्रकार कोई भूतों (प्रेतों) की पूजा (सेवा) करता है तो भूत बनेगा क्योंकि सारा जीवन जिसमें आशक्तता बनी है अन्त में उन्हीं में मन फंसा रहता है। जिस कारण से उन्हीं के पास चला जाता है। कुछेक का कहना है कि पितर-भूत-देव पूजाऐं भी करते रहेंगे, आप से उपदेश लेकर साधना भी करते रहेंगे। ऐसा नहीं चलेगा। जो साधना पवित्र गीता जी में व पवित्र चारों वेदों में मना है वह करना शास्त्र विरुद्ध हुआ। जिसको पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में मना किया है कि जो शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) करते हैं वे न तो सुख को प्राप्त करते हैं न परमगति को तथा न ही कोई कार्य सिद्ध करने वाली सिद्धि को ही प्राप्त करते हैं अर्थात् जीवन व्यर्थ कर जाते हैं। इसलिए अर्जुन तेरे लिए कर्तव्य (जो साधना के कर्म करने योग्य हैं) तथा अकर्तव्य (जो साधना के कर्म नहीं करने योग्य हैं) की व्यवस्था (नियम में) में शास्त्र ही प्रमाण हैं। अन्य साधना वर्जित हैं।

उदाहरण :- इसी का प्रमाण मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित पष्ठ 237 पर है, जिसमें कथा इस प्रकार है :- एक रूची नाम का ऋषि ब्रह्मचारी रह कर वेदों अनुसार साधना कर रहा था। जब वह 40 (चालीस) वर्ष का हुआ तब उस को अपने चार पूर्वज ऋषि-ब्राह्मण जो शास्त्र विरुद्ध साधना करके पितर बने हुए थे तथा कष्ट भोग रहे थे, दिखाई दिए। पितरों ने कहा कि बेटा रूची शादी करवा कर हमारे श्राद्ध निकाल, हम तो दुःखी हो रहे हैं। रूची ऋषि ने कहा पित्रमहो वेद में कर्म काण्ड मार्ग(श्राद्ध करना, पिण्ड भरवाना आदि) को मूर्खों की साधना कहा है। फिर आप मुझे क्यों उस गलत (शास्त्र विधि रहित) साधना पर लगा रहे हो। पितर बोले बेटा यह बात तो तेरी सत्य है कि वेद में पितर पूजा, भूत पूजा, देवी-देवताओं की पूजा (कर्म काण्ड) को अविद्या ही कहा है इसमें तनिक भी मिथ्या नहीं है। इसी उपरोक्त मार्कण्डेय पुराण में इसी लेख में पितरों ने कहा कि फिर पितर कुछ तो लाभ देते हैं।

विशेष :- यह अपनी अटकलें पितरों ने लगाई है, वह हमने पालन नहीं करना है क्योंकि पुराणों में आदेश किसी ऋषि विशेष का है जो पितर पूजने, भूत या अन्य देव पूजने को कहा है। परन्तु प्रभु का आदेश नहीं है। इसलिए किसी संत या ऋषि के कहने से प्रभु की आज्ञा का उल्लंघन करने से सजा के भागी होंगे।

उदाहरण :- एक समय एक व्यक्ति की दोस्ती एक पुलिस थानेदार से हो गई। उस व्यक्ति ने अपने दोस्त थानेदार से कहा कि मेरा पड़ौसी मुझे बहुत परेशान करता है। थानेदार (S.H.O.) ने कहा कि मार लट्ठ, मैं आप निपट लूंगा। थानेदार दोस्त की आज्ञा का पालन करके उस व्यक्ति ने अपने पड़ौसी को लट्ठ मारा, सिर में चोट लगने के कारण पड़ौसी की मत्यु हो गई। उसी क्षेत्र का अधिकारी होने के कारण वह थाना प्रभारी अपने दोस्त को पकड़ कर लाया, कैद में डाल दिया तथा उस व्यक्ति को मत्यु दण्ड मिला। उसका दोस्त थानेदार कुछ मदद नहीं कर सका। क्योंकि राजा का संविधान है कि यदि कोई किसी की हत्या करेगा तो उसे मत्यु दण्ड प्राप्त होगा। उस नादान व्यक्ति ने अपने दोस्त दरोगा की आज्ञा मान कर राजा का संविधान भंग कर दिया। जिससे जीवन से हाथ धो बैठा। ठीक इसी प्रकार पवित्र गीता जी व पवित्र वेद यह प्रभु का संविधान है। जिसमें

केवल एक पूर्ण परमात्मा की पूजा का ही विधान है, अन्य देवताओं - पितरों - भूतों की पूजा करना मना है। पुराणों में ऋषियों (थानेदारों) का आदेश है। जिनकी आज्ञा पालन करने से प्रभु का संविधान भंग होने के कारण कष्ट पर कष्ट उठाना पड़ेगा। इसलिए आन उपासना पूर्ण मोक्ष में बाधक है।

मेरे पूज्य गुरुदेव स्वामी रामदेवानन्द जी लगभग सोलह वर्ष की आयु में पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के लिए अचानक घर त्याग कर निकल गए। प्रतिदिन पहनने वाले वस्त्रों को अपने ही खेतों के निकट घने जंगल में किसी मत पशु की अस्थियों के पास डाल गए। शाम को घर न पहुँचने के कारण घर वालों ने जंगल में तलाश की। रात्रि का समय था। कपड़े पहचान कर दुःखी मन से पशु की अस्थियों को बच्चे की अस्थियाँ जान कर उठा लाए तथा यह सोचा कि बच्चा जंगल में चला गया, किसी हिंसक जानवर ने खा लिया। अन्तिम संस्कार कर दिया। सर्व क्रियाऐं की, तेरहवीं - बरसी आदि की तथा श्राद्ध भी निकालते रहे। लगभग 104 वर्ष की आयु प्राप्त होने के उपरान्त स्वामी जी अचानक अपने गाँव बड़ा पैंतावास जिला भिवानी, त. चरखीदादरी, हरयाणा में पहुँच गए। स्वामी जी का बचपन का नाम श्री हरिद्वारी जी था तथा पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्म था। मुझ दास को पता चला तो मैं भी दर्शनार्थ पहुँच गया। स्वामी जी की भाभी जी जो लगभग 92 वर्ष की आयु की थी। मैंने उस वद्धा से पूछा कि हमारे गुरु जी के घर त्याग जाने के उपरान्त क्या महसूस किया? उस वद्धा ने बताया कि मेरा विवाह हुआ तब मुझे बताया गया कि इनका एक भाई हरिद्वारी था जो किसी हिंसक जानवर ने जंगल में खा लिया था। उसके श्राद्ध निकाले जा रहे हैं। मुझे भी इनके श्राद्ध निकालने को कहा गया। वद्धा ने बताया कि 70 श्राद्ध तो मैं अपने हाथों निकाल चुकी हूँ। जब कभी फसल अच्छी नहीं होती या कोई घर का सदस्य बिमार हो जाता तो अपने पुरोहित (गुरु जी) से कारण पूछते तो वह कहा करता कि हरद्वारी पितर बना है, वह तुम्हें दुःखी कर रहा है। श्राद्धों के निकालने में कोई अशुद्धि रही है। अब की बार सर्व क्रिया मैं स्वयं अपने हाथों से करूंगा। पहले मुझे समय नहीं मिला था, क्योंकि एक ही दिन में कई जगह श्राद्ध क्रियाऐं करने जाना पड़ा। इसलिए बच्चे को भेजा था। तब तक कुछ भेंट चढ़ाओ ताकि उसे शान्त किया जाए। तब उसे 21 या 51 जो भी कहता था डरते भेंट करते थे, फिर श्राद्धों के समय गुरु जी स्वयं श्राद्ध करते थे। तब मैंने कहा माता जी अब तो छोड़ दो इस गीता जी विरुद्ध साधना को, नहीं तो आप भी प्रेत बनोगी। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 सुनाया। तब वह वद्धा कहने लगी गीता मैं भी पढती हूँ। दास ने कहा आपने पढा है, समझा नहीं। आगे से तो बन्द कर दो इस नादान साधना को। वद्धा ने उत्तर दिया न भाई, कैसे छोड़ दें श्राद्ध निकालना, यह तो सदियों पुरानी (लाग) परम्परा है। यह दोष भोली आत्माओं का नहीं है। यह दोष मुर्ख गुरुओं (नीम हकीमों) का है, जिन्होंने अपने पवित्र शास्त्रों को समझे बिना मनमाना आचरण (पूजा का मार्ग) बता दिया। जिस कारण न तो कोई कार्य सिद्ध होता है, न परमगति तथा न कोई सुख ही प्राप्त होता है। प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24।

अब दास (रामपाल दास-लेखक) की प्रार्थना है कि शिक्षित वर्ग अवश्य ध्यान दें तथा शास्त्र विधि अनुसार साधना करके पूर्ण परमात्मा के सनातन परमधाम (शाश्वतम् स्थानम्) अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त करें, जिससे पूर्ण मोक्ष तथा परम शान्ति प्राप्त होती है। (गीता अध्याय 18 श्लोक 62) इसके लिए तत्वदर्शी संत की तलाश करो। (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं आप से उपदेश लेकर आप द्वारा बताई साधना भी करता रहूँगा

तथा श्राद्ध भी निकालता रहूँगा तथा अपने घरेलू देवी-देवताओं को भी उपरले मन से पूजता रहूँगा। इसमें क्या दोष है।

रामपाल दास की प्रार्थना :- संविधान की किसी भी धारा का उल्लंघन कर देने पर सजा अवश्य मिलेगी। इसलिए पवित्र गीता जी व पवित्र चारों वेदों में वर्णित व वर्जित विधि के विपरित साधना करना व्यर्थ है (प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 16 श्लोक 23-24 में)। यदि कोई कहे कि मैं कार में पैंचर उपरले मन से कर दूंगा। नहीं, राम नाम की गाड़ी में पैंचर करना मना है। ठीक इसी प्रकार शास्त्र विरुद्ध साधना हानिकारक ही है।

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं और कोई विकार (मदिरा-मास आदि सेवन) नहीं करता। केवल तम्बाखु (बीड़ी-सिगरेट-हुक्का) सेवन करता हूँ। आपके द्वारा बताई पूजा व ज्ञान अतिउत्तम है। मैंने गुरु जी भी बनाया है, परन्तु यह ज्ञान आज तक किसी संत के पास नहीं है, मैं 25 वर्ष से घूम रहा हूँ तथा तीन गुरुदेव बदल चुका हूँ। कप्या मुझे तम्बाखु सेवन की छूट दे दो, शेष सर्व शर्ते मंजूर हैं। तम्बाखु से भक्ति में क्या बाधा आती है?

दास की प्रार्थना :- दास ने प्रार्थना की कि अपने शरीर को ऑक्सीजन की आवश्यकता है। तम्बाखु का धुआँ कार्बन-डाई-ऑक्साइड है जो फेफड़ों को कमजोर व रक्त दूषित करता है। मानव शरीर प्रभु प्राप्ति व आत्म कल्याण के लिए ही प्राप्त हुआ है। इसमें परमात्मा पाने का रस्ता सुष्मना नाड़ी से प्रारम्भ होता है। जो नाक के दोनों छिद्र हैं उन्हें दायें को ईड़ा तथा बाऐं को पिंगला कहते हैं। इन दोनों के मध्य में सुष्मणा नाड़ी है जिसमें एक छोटी सुई (Needel) में धागा पिरोने वाले छिद्र के समान द्वार होता है, जो तम्बाखु के धुऐं से बंध हो जाता है। जिससे प्रभु प्राप्ति के मार्ग में अवरोध हो जाता है। यदि प्रभु पाने का रस्ता ही बन्द हो गया तो मानव शरीर व्यर्थ हुआ। इसलिए प्रभु भक्ति करने वाले साधक को प्रत्येक नशीले व अखाद्य (मांस आदि) पदार्थों का सर्वदा निषेध है।

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं तम्बाखु प्रयोग नहीं करता। मांस व मदिरा सेवन जरूर करता हूँ। इससे भक्ति में क्या बाधा है? यह तो खाने - पीने के लिए ही बनाई है तथा पेड़-पौधों में भी तो जीव है, वह खाना भी तो मांस भक्षण तुल्य ही है।

दास की प्रार्थना :- यदि कोई हमारे माता-पिता-भाई-बहन व बच्चों आदि को मार कर खाए तो कैसा लगे? ''जैसा दर्द आपने होवै, वैसा जान बिराने। कहै कबीर वे जाऐं नरक में, जो काटें शिश खुरांनें'' जो व्यक्ति पशुओं को मारते समय खुरों तथा शीश को बेरहमी से काट कर मांस खाते हैं वे नरक के भागी होंगे। जैसा दुःख अपने बच्चों व सम्बन्धियों की हत्या का होता है ऐसा ही दूसरे को जानना चाहिए। रही बात पेड़-पौधों को खाने की। इनको खाने का प्रभु का आदेश है तथा ये जड़ जूनी के हैं। अन्य चेतन प्राणियों का वध प्रभु आदेश विरुद्ध है, इसलिए अपराध (पाप) है।

मदिरा सेवन भी प्रभु आदेश नहीं है, परन्तु स्पष्ट मना है तथा मानव मात्र को बर्बाद करने का है। शराब पान किया हुआ व्यक्ति कुछ भी गलती कर सकता है। मदिरा धन - तन व पारिवारिक शान्ति की महा शत्रु है। प्यारे बच्चों के भावी चरित्र पर कुप्रभाव पड़ता है। मदिरा पान करने वाला व्यक्ति कितना ही नेक हो परन्तु उसकी न तो इज्जत रहती है तथा न ही विश्वास।

एक समय यह दास एक गाँव में सतसंग करने गया हुआ था। उस दिन नशा निषेध पर सतसंग किया। सतसंग के उपरान्त एक ग्यारह वर्षीय कन्या फूट-फूट कर रोने लगी। पूछने पर उस बेटी ने बताया कि महाराज जी मेरे पिता जी पालम हवाई अड्डे पर बढ़िया नौकरी करते हैं। परन्तु सर्व पैसे की शराब पी जाते हैं। मेरी मम्मी के मना करने पर इतना पीटते हैं कि शरीर पर

नीले दाग बन जाते हैं। एक दिन मेरे पापा जी मेरी मम्मी को पीटने लगे। मैं अपनी मम्मी के ऊपर गिर कर बचाव करने लगी तो मुझे भी पीटा। मेरा होंठ सूज गया। दस दिन में ठीक हुआ। मेरी मम्मी जी हमें छोड़ कर मेरे मामा जी के घर चली गई। छः महीने में मेरी दादी जी जाकर लाई। तब तक हम अपनी दादी जी के पास रही। पापा जी ने दवाई भी नहीं दिलाई। सुबह शीघ्र ही उठकर नौकरी पर चला गया। शाम को शराब पीकर आता। हम तीन बहनें हैं, दो मेरे से छोटी हैं। अब जब पापा जी शाम को आते हैं तो हम तीनों बहनें चारपाई के नीचे छुप जाती हैं।

विचार करों पुण्यात्माओं जिन बच्चों को पिताजी ने सीने से लगाना चाहिए था तथा बच्चे पिता जी के घर आने की राह देखते हैं कि पापा जी घर आयेंगे, फल लायेंगे। आज इस मानव समाज की दुश्मन शराब ने क्या घर घाल दिए। शराबी व्यक्ति अपनी तो हानि करता है साथ में बहुत व्यक्तियों की आत्मा दुखाने का भी पाप सिर पर रखता है। जैसे पत्नी के दुःख में उसके माता-पिता, बहन-भाई दुःखी, फिर स्वयं के माता-पिता, भाई-बहन, दादा-दादी आदि परेशान। एक शराबी व्यक्ति आस पास के भद्र व्यक्तियों की अशान्ति का कारण बनता है। क्योंकि घर में झगड़ा करता है। पत्नी व बच्चों की चिल्लाहट सुनकर पड़ौसी बीच-बचाव करें तो शराबी गले पड़ जाऐं, नहीं करें तो नेक व्यक्तियों को नींद नहीं आए। इस दास से उपदेश लेने के उपरान्त प्रतिदिन शराब पीने वाले लगभग पचास हजार व्यक्तियों ने सर्व नशीले पदार्थ व मांस भक्षण पूर्ण रूप से त्याग दिया है तथा जिस समय शाम को शराब प्रेतनी का नत्य होता था अब वे पुण्यात्मायें अपने बच्चों सहित बैठकर संध्या आरती करते हैं। हरियाणा प्रदेश व निकटवर्ती प्रान्तों में लगभग दस हजार गाँवों व शहरों में आज भी प्रत्येक में चार -पाँच चैम्पियन (एक नम्बर के शराबी) उदाहरण हैं जो सर्व विकारों से रहित होकर अपना मानव जीवन सफल कर रहे हैं। कुछ कहते हैं कि हम इतनी नहीं पीते-खाते, बस कभी ले लेते हैं। जहर तो थोड़ा ही बुरा है, जो भक्ति व मुक्ति में बाधक है।

मान लिजिए दो किलो ग्राम घी का हलवा बनाया (सतभक्ति की)। फिर 250 ग्राम बालु रेत (तम्बाखु-मास-मदिरा सेवन व आन उपासना कर ली) भी डाल दिया। वह तो किया कराया व्यर्थ हुआ। इसलिए पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की पूजा पूर्ण संत से प्राप्त करके आजीवन मर्यादा में रह कर करते रहने से ही पूर्ण मोक्ष लाभ होता है।

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 26, 27, 28 का भाव है कि जो भी आध्यात्मिक या सांसारिक कार्य करे, सब मेरे मतानुसार वेदों में वर्णित पूजा विधि अनुसार ही कर्म करे, वह उपासक मुझ (काल) से ही लाभान्वित होता है। इसी का वर्णन इसी अध्याय के श्लोक 20,21 में किया है।*

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 29 में भगवान कहते हैं कि मुझे किसी से द्वेष या प्यार नहीं है। परंतु तुरंत ही कह रहे हैं कि जो मुझे प्रेम से भजते हैं वे मुझे प्यारे हैं तथा मैं उनको प्रिय हूँ अर्थात् मैं उनमें और वे मेरे में हैं। राग व द्वेष का प्रत्यक्ष प्रमाण है - जैसे प्रहलाद परमात्मा के आश्रित थे तथा हिरणाकशिपु परमात्मा से द्वेष करता था। तब नसिंह रूप धार कर भगवान ने अपने प्यारे भक्त की रक्षा की तथा राक्षस हिरणाकशिपु की आँतें निकाल कर समाप्त किया। प्रहलाद से प्रेम तथा हिरणाकशिपु से द्वेष प्रत्यक्ष सिद्ध है। इस तरह का ज्ञान काल का अपना मत है जो भ्रमित करने के लिए कहा है।*

।। अति दुराचारी भी भक्ति करने वाला महात्मा के समान है।।

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 30, 31 में कहा है कि चाहे कितना ही अति दुराचारी (वैश्या या वैश्या*

गमन करने वाला) व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) है, यदि वह परमात्मा को अन्तःकरण (हृदय) से चाहता है तो वह भी महात्मा मानने योग्य है, परंतु बलात्कारी न हो। कबीर साहेब कहते हैं, गरीबदास जी महाराज ने कहा है कि :-

गरीब, कुष्टी होवे संत, बन्दगी कीजिए। वैश्या के विश्वास, चरण चित्त दीजिए।।
कबीर, आग पराई आपनी, हाथ दिए जल जाय। नारि पराई आपनी, परसे सर्वस जाय।।

भावार्थ :- यदि कोई कुष्ट रोगी गुरू जी से दीक्षा लेकर भक्ति कर रहा हो तो उससे घृणा न करना, उसको भक्तों वाला सम्मान प्रणाम करके दीजिए। यदि कोई वैश्या भी गुरू जी से दीक्षा लेकर साधना करती है तो उसको सम्मान से प्रणाम कीजिए। ऐसा करने से उसका मनोबल बढ़ेगा तथा बुराई करने से संकोच करेगी और सुधर जाएगी।

❖ *कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि यदि आप वैश्या तथा दुराचारी को इसलिए हेय समझते हो कि वे परस्त्री तथा पर-पुरूष से भोग-विलास करते हैं। आप अपनी विवाहित पत्नी से भोग-विलास (Sex) करते हैं और अपने को उनसे श्रेष्ठ मानते हो तो यह विचार करो कि यदि स्त्री मिलन करने से सब भ्रष्ट हो जाते हैं तो आप भी तो स्त्री या पुरूष से मिलन करते हो। जैसे अग्नि अपनी हो चाहे अन्य की, यदि हाथ दोगे तो जलोगे ही। अपनी अग्नि कोई बचाव नहीं करती। इस प्रकार विचार कर अपने कर्मों को देखो। तब दूसरे से कहो।*

❖ *व्यभीचार यानि दुराचार वह है जिसमें स्त्री-पुरूष स्वइच्छा से मिलन (Sex) करते हैं जो प्रत्येक सभ्य समाज की प्रतिष्ठा के विरूद्ध है। यह बलात्कार नहीं है, व्यभीचार कहा जाता है। यह मानव समाज पर कलंक है।*

❖ *बलात्कार वह है जो किसी लड़की या स्त्री से उसकी सहमति के बिना बलपूर्वक संभोग पुरूष द्वारा किया जाता है। वह नारी के लिए अभिशाप है। समाज के लिए अति पीड़ादायक तथा शर्मनाक है जो क्षम्य नहीं है। उसे दंडित किया जाना चाहिए। सुधरने के लिए भी सजा के दौरान अच्छे विचारों की पुस्तक तथा सत्संग सुनाए जाऐं। उस व्यक्ति को चाहिए कि अपनी गलती को सार्वजनिक करे जिससे समाज के अन्य सिरफिरों को नसीहत लगे। उनकी रूह काँप जाए। उनको पता चले कि जरा-सी चूक से जीवन नष्ट हो जाता है। समाज में स्वयं तो मुँह दिखाने लायक रहता ही नहीं, माता-पिता, भाई-बहन तथा कुल के लोगों का सिर भी शर्म से नीचा कर देता है। समाज में उनका जीना भी दुस्वार हो जाता है।*

व्यभीचारी भी समाज में अपने कुल को लज्जित करता है। समाज को बिगाड़ता है। यदि वे (स्त्री-पुरूष) परमात्मा के मार्ग पर लग जाते हैं तो सुधर भी जाता है।

एक समय एक औरत को किसी गाँव में पीटा जा रहा था। उसी समय एक महात्मा जी वहां आए। उन्होंने उस अबला का कसूर (दोष) पूछा तो पता चला कि यह दुराचारिणी (व्याभिचारिणी) है। तब महात्मा जी ने कहा कि मैं बताता हूँ इसको कैसे सजा देनी है। सब ने कहा बताओ दाता। महात्मा जी ने कहा सब एक-एक पत्थर अपने-2 हाथ में उठाओ तथा बारी-बारी इसको मारना है। परंतु पत्थर वह मारे जिसने यह पाप कभी भी न किया हो और आगे कभी भी न करे। यदि ऐसा हो, तो मारे, नहीं तो खैर नहीं है। देखते ही देखते सभी के हाथों से पत्थर छूट गए तथा अपने-अपने घर को चले गए।

कबीर, बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिला कोए।
जब दिल खोजा आपना, मुझसे बुरा न कोए।।

भावार्थ :- कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि अन्य को आप जिन कर्मों के कारण दोष देखते हो, वे कर्म आप स्वयं भी कर रहे हो। यदि आप अपने मन की शरारत को देख लेंगे तो आप जी को अपने से बुरा यानि घटिया कोई दिखाई नहीं देगा।

अध्याय 9 के श्लोक 31 में कहा है कि ऐसा व्यक्ति सतसंग सुन कर जल्दी ही सुधर जाता है और फिर सुचारू रूप से भक्ति करके मुक्ति का प्रयत्न करता है। परन्तु तत्वज्ञान के अभाव से वह मेरी साधना पर आश्रित रहता है जिस कारण से उसे बहुत समय अर्थात् एक कल्प तक शान्ति प्राप्त होती है। इसलिए उस भक्त की भक्ति नष्ट हो जाती है, क्योंकि पूर्ण मुक्ति तो पूर्ण परमात्मा की भक्ति करने से होती है, उसे गीता बोलने वाला प्रभु कह रहा है कि मैं उस परमेश्वर के तत्वज्ञान को नहीं जानता, उसके लिए उन तत्वदर्शी सन्तों की खोज कर, गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में। अध्याय 9 के श्लोक 34 में वर्णन है कि स्थिर मन से शास्त्रानुकूल पूजक शास्त्रविधि से भक्ति करने वाला (मद्भक्तै कहलाता) मत-भक्त (शास्त्रानुकूल साधक) बन कर मुझे प्रणाम (आदर) कर इस प्रकार अन्तरात्मा से (मत्परायण) शास्त्रानुकूल साधना पर आश्रित साधक भी मुझे ही प्राप्त होगा। भावार्थ है कि भूत-पितर नहीं बनेगा तथा पूर्ण मुक्त भी नहीं होगा।

❖ *अध्याय 9 के श्लोक 32, 33, 34 में कहा है कि चाहे पापिन स्त्री वैश्या तथा शुद्र भी क्यों न है मेरी भक्ति करने वाला मेरी वाली गति को प्राप्त हो जाता है। फिर पुण्य आत्माओं ब्राह्मण-राजर्षि का तो कहना ही क्या है? पूर्ण मोक्ष के लिए उस पूर्ण परमात्मा का भजन कर मेरा काल लोक तो नाशवान तथा दुःखरूप है यदि इसमें रहना है तो मेरा भजन कर तथा जो मेरे में मन वाला (अनन्य मन से और सर्व देवी-देवताओं की भक्ति तथा तीनों गुणों - ब्रह्मा-विष्णु-शिव की आस्था भी त्याग कर) मेरी भक्ति कर मेरे द्वारा लाभ प्राप्त करेगा अर्थात् शास्त्रानुकूल (वेदों में वर्णित भक्ति विधि के अनुसार) साधना करने वाला भक्त स्वर्ग में अपने पुण्यों को समाप्त करके फिर जन्म-मरण व नीच योनियों (कुत्ता-कुत्तिया, गधा-गधी आदि-2) में कष्ट पर कष्ट उठाएगा। यह भगवान काल (ब्रह्म) की वेदों अनुसार साधना करने का भगवान ज्योति निरंजन द्वारा लाभ दिया जाता है। इसका पूर्ण प्रमाण इसी अध्याय के श्लोक 20,21 में दिया गया है। क्योंकि गीता बोलने वाला प्रभु (काल) कह रहा है कि मेरी पूजा ओ३म नाम जाप की है (गीता अध्याय 8 श्लोक 13) उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति ओं-तत्- सत् नाम जाप से करने का निर्देश है (गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में) कोई तत्वदर्शी संत बताएगा, जिससे पूर्ण मोक्ष होगा (गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में)।*

अदश परमात्मा ब्रह्म (काल) की साधना भी मतानुसार करने से लाभ होगा। ब्रह्म भगवान ने अपनी पूजा का विधान बताया है कि आन उपासनाएँ {(देवी-देवताओं की पूजा व उनमें मुख्य तीन देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) की पूजा को भी} त्याग कर केवल एक परमात्मा (ब्रह्म) पर आधारित हो कर अव्याभिचारिणी भक्ति से ब्रह्म पूजा करने वाला ही काल भगवान द्वारा विधान किए फल प्राप्त करेगा। स्वर्ग-नरक, जन्म-मरण चौरासी लाख जूनियों का कष्ट यह काल (ब्रह्म) भगवान का अटल विधान (नियम) है जो शास्त्रों (वेदों, गीता जी आदि) में दिए विचारों को काल भगवान अपना मत (यह मेरा मत है) कहता है। काल ब्रह्म की मुक्ति प्राप्त करके भी जीव सुखी नहीं है क्योंकि स्वयं भगवान (ब्रह्म) कह रहा है कि मेरी (गतिम्) मुक्ति (अनुत्तम) अश्रेष्ठ है। क्योंकि भक्त आत्मा अपने तन-मन- धन व उद्धार मन से ब्रह्म (काल) साधना में जीवन भी खो देता है। यह जानकर कि मैं सुखी (पूर्ण मुक्त) हो जाऊँगा परंतु ऐसा नहीं होता। इसलिए ब्रह्म (काल) भगवान भी स्वयं गीता जी के अध्याय 7 के श्लोक 18 में कहता है कि वे भक्त

वैसे तो उद्धार आत्मा हैं परंतु इतनी मेहनत के पश्चात् भी मेरी घटिया मुक्ति को ही प्राप्त होते हैं अर्थात् पूर्ण मुक्त नहीं, पूर्ण सुखी नहीं। इसलिए फिर भगवान कहता है कि अर्जुन तू मेरा बहुत प्रिय है। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62, अध्याय 15 श्लोक 4 आदि-2 में कहा है कि तुझे सही ज्ञान बताता हूँ। तू उस पूर्ण परमात्मा की साधना कर। उसके लिए किसी तत्वदर्शी संत की तलाश कर, फिर जैसे वह पूजा विधि बताए ऐसे साधना करना (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)। फिर तेरा जन्म-मरण चौरासी लाख जूनियों का कष्ट पूर्णतया मिट जाएगा। अर्थात् पूर्ण मोक्ष हो जाएगा।

❖ *विशेष :- गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने गीता अध्याय 9 के श्लोक 34 तथा अध्याय 18 श्लोक 65 में कहा है कि मुझे (माम् नमस्कुरू) नमस्कार (मद्भक्तः = मत् भक्तः) मेरा भक्त बन (मद्या जी = मत् याजी) मेरा पूजन करने वाला हो। (मत्परायणः = मत् परायणः) मेरे आश्रित हो यानि मेरे पर समर्पित हो। इस प्रकार मुझे ही प्राप्त होगा। गीता अध्याय 4 श्लोक 32 व 34 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा पूर्ण मोक्ष मार्ग का ज्ञान स्वयं अपने मुख से बोली वाणी में विस्तार से बताता है। उससे सर्व पाप नाश हो जाते हैं। उस ज्ञान को तू तत्वदर्शी संतों के पास जाकर समझ। उनको (प्रणिपातेन) भली-भांति दण्डवत् प्रणाम करने से कपट छोड़कर प्रश्न करने से वे (तत्वदर्शिनः) परमात्म तत्व को भली-भांति जानने वाले महात्मा तुझे उस तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे। विचार करना है कि गीता ज्ञान दाता ने अपने लिए तो केवल नमस्कार करने को कहा तथा पूर्ण परमात्मा के द्वारा दिए तत्वज्ञान जो पूर्ण मोक्षदायक है, को जानने वाले संत को दण्डवत् प्रणाम करने को कहा है। इससे स्वसिद्ध है कि तत्वदर्शी पूर्ण परमात्मा का कृपापात्र होने के कारण काल ब्रह्म से भी अधिक आदरणीय है।*

❑❑❑